द्वितीय अध्याय

" 'परिशिष्ट' उपन्यास का परिचयात्मक विवेचन"

द्वितीय अध्याय

" 'परिशिष्ट' उपन्यास का परिचयात्मक विवेचन"

प्रस्तावना :

आज का युग गद्य का युग है। गद्य की विविध विधाओं में सर्वाधिक शक्तिशाली विधा उपन्यास है। उपन्यास में व्यक्ति और समाज का सफलतापूर्वक चित्रण किया जाता है इसलिए आधुनिक साहित्य विधाओं में उपन्यास का सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास का कथ्य और शिल्प युगानुरूप बदलता जा रहा है जिस प्रकार कथ्य और शिल्प में बदलाव आता गया उसी प्रकार साहित्यकारों की सोच और विचारधारा में भी बदलाव आता गया। समाज-जीवन के विभिन्न प्रश्नों को उजागर करने का कार्य साहित्यकार करने लगे। अत: गिरिराज किशोर भी समाज की सच्चाई से दूर नहीं रहे। उन्होंने 'परिशिष्ट' जैसे बृहत् कथानक वाले महाकाव्यात्मक उपन्यास का निर्माण किया।

2.1 कथावस्तु का स्वरूप :

कथावस्तु को उपन्यास का महत्त्वपूर्ण तत्व माना जाता है। कथानक का चुनाव और निर्माण उपन्यास का प्रमुख विषय है। किसी उपन्यास की मूल कहानी को या विभिन्न घटनाओं के घात-प्रतिघातों से मिलकर जो कथा बनती है, उसे ही उपन्यास की कथावस्तु कहा जाता है। उपन्यास में कथावस्तु का ऐसा गठन होना चाहिए जिसमें घटनाएँ व्यवस्थित तथा श्रृंखलाबद्ध हो, जिससे उपन्यास में गतिशीलता बनी रहे। उपन्यास के तत्वों में सर्वप्रधान कथानक ही है। वस्तुत: कथानक उपन्यास का मूलभूत तत्व है, जिसके अभाव में उपन्यास के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्रतापनारायण टंडन ने लिखा है - "कथानक उपन्यास का वह मूल ढाँचा होता है जिसपर उपन्यास रूपी विशाल भवन का निर्माण किया जाता है।"[1] अत: उपन्यासकार को

1. डॉ.प्रतापनारायण टंडन - हिंदी उपन्यास कला, पृष्ठ - 140

कथावस्तु का चयन तथा निर्माण में अत्यंत सजग रहना आवश्यक है।

"संपूर्ण उपन्यास की कहानी जिन उपकरणों से मिलकर बनती है, वे कथावस्तु कहलाते हैं। ये उपकरण कथासूत्र (थीम); मुख्य कथानक (प्लाट); प्रासंगिक कथाएँ या अंतर्कथाएँ (एपीसोड); उपकथानक (अंडर प्लाट); पत्र, समाचार, प्रामाणिक लेख (डाक्यूमेंट्स); डायरी के पन्ने आदि है, जिनका उपन्यास लेखक अपनी आवश्यकतानुसार उपयोग करता है।"[1] अत: स्पष्ट है कि उपन्यासकार मुख्य कथा के साथ अनेक उप एवं गौण कथानकों को मिलाकर उपन्यास की कथावस्तु का निर्माण करता है। उपन्यास में मुख्य कथा के साथ-साथ अनेक गौण कथाएँ होती हैं। हर एक पात्र अपनी-अपनी कथा को लेकर उपन्यास में अवतारित होते है, जिससे उपन्यास की कथा में बिखराव नजर आता है।

उपन्यास के कथानक को तीन प्रमुख भागों में विभाजित किया जाता है। 1. प्रारंभ या प्रस्तावना 2. मध्य या विकास 3. समाप्ति या परिणाम। कथावस्तु को रोचक बनाने के लिए उपन्यास का प्रारंभ नाटकीय तथा रोचक संवाद आदि से किया जाता है। उसके मध्य में आरंभिक समस्या का विकास दिखाया जाता है। उपन्यास के प्रभावी अंत में ही उसकी सफलता निहित होती है।

उपन्यास की कथावस्तु के दो प्रकार माने जाते हैं -

1. मुख्य कथा -

उपन्यास की प्रधान या मुख्य कथा को अधिकारिक कथा कहा जाता है। उपन्यास के प्रमुख पात्र को साथ लेकर चलनेवाली कथा को मुख्य कथा कहा जाता है। किसी भी उपन्यास में एक से अधिक मुख्य कथायें नहीं हो सकती।

2 प्रासंगिक कथा -

उपन्यास के प्रमुख पात्र के सहयोगी पात्रों से संबंधित कथा अथवा कथाएँ

---

1. डॉ.सुरेश साळुंखे - गिरिराज किशोर का उपन्यास साहित्य : एक अनुशीलन, पृष्ठ - 78

प्रासंगिक कथा के अंतर्गत आती हैं। किसी भी उपन्यास की प्रासंगिक कथाएँ एक या एक से अधिक भी हो सकती है। इस तरह कथावस्तु के मुख्य कथा और प्रासंगिक कथा ऐसे दो प्रकार माने जाते है।

हिंदी साहित्य में 1960 ई. के बाद उपन्यास शिल्प विधा में परिवर्तन की शुरूआत हुई। परंपरागत रूप में कथावस्तु को उपन्यास का प्राणतत्व माना जाता था परंतु 1960 ई. के बाद हिंदी उपन्यास में कथातत्व के प्रति उदासीनता व्यक्त होने लगी। 1975 ई. के बाद हिंदी उपन्यास की शिल्प विधा में हुए बदलाव स्पष्टता से परिलक्षित होने लगे। डॉ. चंद्रकात बांदिवडेकर ने लिखा है - "जीवन का अनुभव जो उपन्यासों के माध्यम से व्यक्त होता है, वह अनेक आवर्तो-भँवरों से विलक्षण बेतरतीबी से ऐसा प्रवाहमान हो गया है कि कथा के बंद तालाब में उसे रोकने का प्रयास अब निरर्थक सिद्ध हो रहा है।"[1] अत: उपन्यास की कथावस्तु प्रयोगशील होने लगी। कथावस्तु में यथार्थ घटनाओं को अभिव्यक्ति दी जाने लगी। व्यंग्यात्मकता के साथ जीवन की असलियत को उद्घाटित किया जाने लगा। आज उपन्यास में कथा का पारंपारिक रूप प्रारंभ, मध्य, अंत आदि के रूप में देखना आवश्यक हो गया है। उपन्यास इन तत्वों से भी अलग बन जाने लगे हैं।

इस लघु शोध-प्रबध के लिए चुना हुआ उपन्यास 1984 ई. का होने के कारण हिंदी उपन्यासकार के नौंवे दशक की कथावस्तु की सारी प्रवृत्तियाँ इसमें नजर आती हैं। आज के उपन्यासकार नए-नए विषयों की तलाश करते हैं। नए विषयों को लेकर उपन्यास की कथावस्तु को नए-नए प्रयोगों में बाँधते हैं। गिरिराज किशोर ऐसे ही लेखक हैं कि जिन्होंने अनेक अछूते विषयों को लोगों के सामने प्रस्तुत किया है जैसे कि विज्ञान, तकनीकी, शस्त्रास्त्र, आरक्षण, परवर्तित सामंती मानसिकता तथा वैविध्यपूर्ण भाषा तथा शिल्पगत प्रयोग आदि। 'परिशिष्ट' उपन्यास में दलित जीवन की समस्या,

1. डॉ.चंद्रकांत म.बांदिवडेकर - उपन्यास स्थिति और गति, पृष्ठ - 9

15498

आरक्षण, दलित छात्रों का शोषण, शिक्षा संस्थाओं में फैली बुराईयों का चित्रण किया है। इस उपन्यास में गिरिराज किशोर ने कथा की अपेक्षा चरित्र को तथा चरित्र से ज्यादा परिवेश को महत्त्व दिया गया है। हिंदी के नौंवे दशक के उपन्यासकारों ने युग का बदलाव, मानव जीवन की बदलती स्थिति आदि को उपन्यासों में स्थान दिया है। जिससे उपन्यास में परंपरागत तत्वों में बदलाव नजर आता है।

'परिशिष्ट' उपन्यास की कथावस्तु को इसी पृष्ठभूमि पर रखकर कथावस्तु का परिचयात्मक अनुशीलन किया है।

2.2 'परिशिष्ट' उपन्यास की कथावस्तु -

गिरिराज किशोर द्वारा लिखित 'परिशिष्ट' उपन्यास का प्रकाशन **1984** ई. में राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली से हुआ है। प्रकाशन क्रम की दृष्टि से गिरिराज किशोर का यह दसवाँ उपन्यास है। दलित लोगों के जीवन की समस्याओं पर आधारित बारह भागों में विभाजित यह एक बृहत् रचना है। सदियों से दलितों के प्रति देखने की सवर्ण मानसिकता में आज भी कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया है, इसे 'परिशिष्ट' में स्पष्ट किया है।

प्राचीन काल से भारतीय समाज में दलित लोग सवर्णों द्वारा होनेवाले अन्याय-अत्याचार को सहते आ रहे हैं। उसमें आज भी कोई बुनियादी परिवर्तन दिखाई नहीं देता। म.गांधी, म. फुले, डॉ.बाबासाहेब आंबेडकर, राजर्षि शाहू महाराज आदि समाज-सुधारकों ने दलितों को मानवी अधिकार प्राप्ति हेतु पहल की। समाज जीवन में दलितों को सम्मान से जीवनयापन के लिए विशेष प्रयास किए। डॉ.आंबेड़कर जी के प्रयासों से स्वतंज्यता के बाद दलितों तथा पिछड़ी जनजातियों को आरक्षण के प्रावधान से शिक्षा संस्थाओं, नौकरियों में प्रवेश मिलना आरंभ हुआ। संसद तथा विधानसभा में प्रतिनिधित्व मिला। अवसर की कमी और आरक्षण का प्रावधान से दलितों के प्रति सवर्णों के मन में घृणा और क्रोध की अभिव्यक्ति हुई। लेकिन यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि सदियों से दलित आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक दृष्टि से इतने पिछड़े हैं कि आरक्षण के

अलावा वे सवर्णों की बराबरी नहीं कर सकते। गिरिराज किशोर ने 'परिशिष्ट' की भूमिका में लिखा है - "सच पूछिए तो जातियाँ अनुसूचित नहीं होतीं। मानसिकता होती है। मानना और समझना, दोनों!"[1] अत: परिशिष्ट उपन्यास में दलित जीवन के सूक्ष्म अंकन के साथ देश की महान शिक्षा संस्थानों में दलितों को दबानेवाली सवर्ण मानसिकता का चित्रण किया है।

उपन्यास का नायक अनुकूल एक दलित छात्र है। वह 'फैक्ट्रि' में सुपरवाइजर पद पर काम करनेवाले बावनराम जैसे निम्नवर्गीय व्यक्ति का पुत्र है। अपनी बिरादरी में दसवीं पास करनेवाला वह पहला लड़का है। बावनराम अनुकूल को इंजीनियर बनवाना चाहते हैं। इसलिए वे अनुकूल को देश का सर्वोच्च तकनीकी शिक्षा संस्थान आई. आई.टी. में भेजना जरूरी समझते हैं लेकिन उनके परिवार और आसपास के लोग इसे विरोध करते हैं। हर एक का अपना अलग-अलग तर्क होता है लेकिन बावनराम इसकी चिंता नहीं करते। इसी बीच अनुकूल की शादी के रिश्ते आने लगते हैं। बावनराम 'शारदा ॲक्ट' और पढ़ाई के कारण अनुकूल की शादी नहीं करना चाहते। बिरादरी वाले उन्हें भला-बूरा कहते हैं- "चाम का ही बेटा तो पैदा किया, सोने-चाँदी का तो नहीं, जो ऐसे नखरे जोत रहा है।"[2] लेकिन बावनराम पर इसका कोई परिणाम नहीं होता।

बावनराम अनुकूल को हमेशा ही ऊँची जगह पर असीन होता देखना चाहते है। उन्हें यह खबर मिलती है कि सरकार ने आई. आई.टी. में अनुसूचित जाति के छात्रों को बिना किसी सामूहिक टेस्ट लिये दाखिल करने का निर्णय लिया है। बावनराम भी आरक्षण का लाभ उठाना जरूरी समझते हैं इसलिए वे अपने विभाग के सांसद से मिलने दिल्ली जाते हैं। वे अनुकूल के साथ दिल्ली में सांसद चौधरी साहब के घर अतिथिगृह में अन्य लोगों के साथ ठहरते हैं। वहाँ उन्हें सवर्ण लोगों की जातीयवादी

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, भूमिका से, पृष्ठ - 7
2. वही - पृष्ठ - 12

मानसिकता का सामना करना पड़ता है। सवर्ण लोग आपस में कहते हैं "बाहर जो टिका है ना, जात का सरकारी पण्ड़त है। पास के गाँव का ही है। अब देखना, सब कुछ करा के जायेगा। हम सोचत हैं, इसी सरकारी महादेव पर हम भी जाकर जल चढ़ा दें।"[1] बावनराम जैसे दलित अपने घर ठहरने के कारण चौधरी साहब की पत्नी भी नाराज है। चौधरी साहब के दोस्त सांसद राजेंद्रसिंह का मानना है कि भगवान ने जिसे जहाँ रखा है वह वहीं रहेगा। वे दलितों को आरक्षण जैसी अन्य सुविधाएँ देने के विरोध में है। वे उसे टॉनिक मानते है। अत: स्पष्ट है कि सवर्ण लोग आज के युग में भी दलितों के साथ रहना पसंद नहीं करते। इसी मानसिकता के कारण चौधरी साहब के घर में सवर्ण लोगों द्वारा बावनराम और अनुकूल का सामान उलट-पुलट दिया जाता है। उनकी खाटे निकालकर कमरे के बाहर रख दी जाती हैं। अत: ऐसी घटनाओं से अधिकतर सवर्ण लोगों के मन में दलितों के प्रति घृणा और जातीय द्वेष की भावना स्पष्टता से परिलक्षित होती है।

अनुकूल के आई. आई.टी.प्रवेश के संबंध में बावनराम अनुकूल के साथ सांसद चौधरी साहब के घर ठहरते है लेकिन चौधरी साहब बात को टाल देते है। आखिर एक दिन इस विषय पर बातचीत होती है। बावनराम चौधरी साहब से कहते हैं "यह बच्चा इसलिए पैदा नहीं हुआ कि बाप की तरह लोहा-लंगड़ ढोये। उपर से बूटों की मार पड़े। अगर यही लड़के आगे बढ़ने की नहीं सोचेंगे तो फिर हम लोगों के सामने से तो 'आगे' शब्द ही लोप हो जाएगा। एक-आध कदम ये भी आगे बढ़े चौधरी साहब!"[2] चौधरी साहब बावनराम को आई. आई. टी.में होनेवाली कठिनाईयाँ, वहाँ के लड़कों का विदेश जाना, होशियार लड़कों का बिघड़ना, हर साल एकाध आत्महत्या होना, होशियारों के बीच मुकाबला आदि बाते बताकर बावनराम को अपने निर्णय से परावृत्त करना चाहते है लेकिन बावनराम अनुकूल को आई. आई.टी.में पढ़ाई के लिए भेजने

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 35
2. वही - पृष्ठ - 62

के निर्णय पर अड़िग रहते हैं। अत: चौधरी साहब बावनराम को शिक्षा मंत्रालय में कृष्णन साहब के पास भेज देते हैं। वे कृष्णन साहब को मिलने के लिए शास्त्री भवन जाते हैं। वहाँ पास बनानेवाला बाबू उनका मजाक उड़ाता है। उन्हें जातीयता के कारण 'सरकार के हकीकी दामाद' कहता है। आखिर बावनराम कृष्णन साहब तक पहुँच जाते हैं। कृष्णन भी सांसद चौधरी साहब की तरह बावनराम को आई.आई.टी. के माहौल की कल्पना देते हैं वे कहते है - "मिस्टर बावनराम... अपना बच्चे को आई. आई.टी. में जरूर भेजेगा! हम कहता है नहीं भेजो... पिस जायेगा। लड़का लोग भी तंग करेगा और मास्टर लोग भी कहेगा कि कुछ नहीं जानता ... भगाओं!"[1] वहाँ हर समय तनाव रहता है, उसके कारण छात्र आत्महत्या करते हैं, अध्यापकों का दलित छात्रों के प्रति घृणित व्यवहार, होनेवाला खर्चा आदि बातें कृष्णन बताते हैं। लेकिन बावनराम तो अपने निर्णय से पीछे हटने का नाम ही नहीं लेते। वे कहते है - "हमारा लड़का ऐसा नहीं करेगा... कभी नहीं करेगा। इन्जीनियर हो जाएगा तो आपके चरणों में लाकर डालेगा।"[2] कृष्णन साहब अनुकूल को आरक्षण के तहत प्रवेश देने का वादा करते हैं और उसे निभाते भी हैं। अत: स्पष्ट है कि दलितों के प्रति सब दलितेत्तर लोगों का दृष्टिकोण घृणित है ऐसा नहीं। ठाकुर राजेंद्रसिंह, सांसद चौधरी की पत्नी और उनके घर ठहरे अन्य लोगों का दलितों के प्रति देखने का दृष्टिकोण पूर्वग्रहदूषित दिखाई देता है लेकिन सांसद चौधरी, कृष्णन जैसे अधिकारी अनुकूल की मदद करना चाहते हैं। सांसद चौधरी का कहना है- "राजनीति में रहना है, तो पानी में महल बनाकर नहीं रह सकते। सबको गले लगाना होगा और सबके गले लगना होगा।"[3] कृष्णन साहब भी बावनराव और अनुकूल के प्रति सहानुभूतिपरक दृष्टिकोण रखते हैं।

अनुकूल के आई.आई.टी. प्रवेश के संदर्भ में अनेक सुनी-अनसुनी बातें सामने आती हैं। आई.आई.टी. का वातावरण दलित तथा निम्नवर्ग के छात्रों के लिए

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 81
2. वही - पृष्ठ - 81
3. वही - पृष्ठ - 58

लाभदायक नहीं है। उन्हें अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। वहाँ के छात्र, अध्यापकों और अधिकारियों का दृष्टिकोण पूर्वाग्रह से युक्त है। बावनराम और अनुकूल पहले इन बातों की ओर ध्यान नहीं देते हैं लेकिन अनुकूल के वहाँ रहने के बाद बावनराम यह सोचने पर विवश होते हैं कि ऐसी जगह अनुकूल जैसे दलित छात्रों का रहना लाभदायक नहीं हैं।

अनुकूल को आरक्षण के तहत आई. आई.टी.में प्रवेश मिलता है। प्रवेश प्राप्त होने के पहले दिन से ही उसे वहाँ के माहौल की झलक देखने को मिलती है। अनुकूल जैसे जो छात्र आरक्षण के प्रावधान से आये थे उन्हें वी.वी.आई.पी अर्थात अत्याधिक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति जैसे व्यंग्यात्मक शब्दों से पुकारा जाता है। यहाँ छात्रों के रहने के लिए छात्रावास की सुविधा है। दलित छात्र छात्रावास के जिस 'विंग' में रहते हैं उस 'विंग' को सवर्ण छात्र मजाक से 'गांधी मोहल्ला' या 'जाँघियाँ कण्टिजेन्ट' कहते है। आई.आई.टी. में रैगिंग भी चलती है। यहाँ की सारी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम द्वारा दी जाती है जिससे सामान्य स्कूल से आये छात्रों को अंग्रेजी जल्दी समझ में नहीं आती। अंग्रेजी बोल न सकने के कारण उन्हें बात-बात पर अपमानित होना पड़ता है। जो छात्र अंग्रेजी नहीं बोलते उन्हें हीनता की दृष्टि से देखा जाता है। वे अध्यापक की अवकृपा का शिकार होते हैं इनमें से दलित छात्रों की संख्या अधिक हैं। यहाँ के सारे अध्यापक अंग्रेजी ऐसे बोलते है जैस की उन्होनें अपनी मातृभाषा में कभी बात ही नहीं की है। अत: स्पष्ट है कि अंग्रज चले गए लेकिन उनकी भाषा, तौर-तरीके यहाँ से नहीं गये उल्टे अधिक मजबूत हुए दिखाई देते हैं।

आई.आई.टी. में दलित छात्रों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। आर्थिक अभाव के कारण यहाँ के दलित छात्र अपने मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति भी नहीं कर सकते। बाबूराम के पास तो जाँघिया खरीदने के लिए भी पैसे नहीं होते। सरकार से मिलनेवाला वजीफा भी उन्हें समय पर नहीं मिलता। इसी कारण कुछ दलित छात्र मेस मैनेंजर से सूद पर पैसे लेने के लिए विवश होते हैं। आर्थिक अभाव के

कारण अनेक दलित छात्रों की शिक्षा में बाधाएँ उपस्थित होती है। उच्चवर्गीय छात्र खन्ना और उसके साथी दलित छात्रों को जातीयता के संदर्भ में बार-बार अपमानित करते हैं। खन्ना सभी दलित छात्रों को रियाया के रूप में देखना चाहता है। वह ऐसे सभी दलित छात्रों को सजा देना चाहता है जो उसकी रियाया बनने से इन्कार करें। खन्ना अनुकूल को कहता है - "अगर तुम अपनी सीमाओं को समझते हो तो ठीक है... नहीं समझते तो समझो। रियाया की स्थिति से उपर उठने में अभी समय लगेगा। अगर हम लोगों की बराबरी करनी थी तो वैसा ही बीज चाहिए था..."[1] खन्ना हर वक्त दलित छात्रों को नीचा दिखाने की कोशिश करता है। वह दलित छात्र रामउजागार और अनुकूल को धमकी भरा पत्र लिखता है- "तुम्हारे जैसे निर्मित होते गांधी की भ्रूणहत्या आसानी से हो सकती है। तुम दोनों हरामजादों से फिर कहा जाता है कि इस अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त उच्चस्तरीय संस्थान को बरबाद करने से बाज आओ। जाओ, अपना पैतृक धन्धा करो।"[2] इसी तरह खन्ना बार-बार अनुकूल को धमकाता है। स्टुडेन्टस् कन्शेशन लेकर घर जाने को कहता है। अत: स्पष्ट है कि दलित छात्रों को उच्चवर्गीय छात्रों द्वारा हमेशा त्रस्त किया जाता है।

दलित छात्रों को सरकार से दिया जानेवाला वजीफा समय पर न मिलने से अनुकूल दलित छात्रों की मिटिंग बुलवाकर इस बात पर चर्चा करता है। खन्ना को लगता है कि अनुकूल नेतागिरी कर रहा है। वह अनुकूल से झगड़ा मोल लेता है। खन्ना और उसके साथी मारपीट में अनुकूल की टाँग तोड़ देते हैं। अनुकूल को देखने उसके पिताजी आते है तो खन्ना उन्हें भी धमकाकर अनुकूल को घर वापस ले जाने को कहता है - "उसे लेकर चलते बनिये। वह मुगालते में है कि गांधी बनकर हाथ में डण्डा लेकर दाण्डी मार्च करेगा। वे दिन हवा हुए जब दाण्डी मार्च होता था। जो जिस जगह के लायक है उसे वहीं पहुँचा दिया जाना चाहिए।"[3] छात्रों के घर से आयी चिट्ठियाँ खन्ना द्वारा

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 153
2. वही - पृष्ठ - 255
3. वही - पृष्ठ - 185

पढ़ी जाने पर ही छात्रों को मिलती हैं। आई.आई.टी. का प्रशासन भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ता क्योंकि वह कमिशनर का बेटा है। "खन्ना के बारे में यही कहा जाता था कि वह बड़े घर का लड़का है और फैकल्टी उसकी जेब में है।"[1] यहाँ के अधिकारी भी मानते हैं कि खन्ना दलित छात्रों की न्यूसेन्स खत्म करना चाहता है। अत: संस्थान के अध्यापक और अधिकारी भी उच्चवर्गीय छात्रों का साथ देते हुए दिखाई देते है तथा दलित छात्रों के प्रति भेदभाव का दृष्टिकोण रखते है। अनुकूल के पिताजी बावनराम मारपीट में घायल अपने बेटे अनुकूल को देखने आते है। आई.आई.टी.के अधिकारी जातीयता के कारण उन्हें गेस्ट हाऊस में ठहराने को तैयार नहीं होते। शोध-छात्रा नीलम्मा संघर्ष करके बावनराम को वहाँ ठहराने की मान्यता लेती है। वहाँ से जाते समय बावनराम कहते है - "बड़ी जगहों को बड़ी समझता था, पर यहाँ आकर लगा कि छोटी जगहों से भी ज्यादा छोटापन है। खासतौर से छोटे लोगों को लेकर।"[2]

'परिशिष्ट' उपन्यास का और एक महत्त्वपूर्ण पात्र है- रामउजागार। आरक्षण के पहले ही वह जे. ई.ई. (ज्वाइण्ट एण्टेरेंस एक्जामिनेशन) द्वारा संस्थान में दाखिल होता है। वह अनुसूचित जाति का होने के कारण खन्ना जैसे सवर्ण छात्र उससे जलते हैं। रामउजागर का मानना है कि हर व्यक्ति को आत्मसम्मानी होना चाहिए। उसके अनुसार बदतमीजी भी मत करो और आत्मसम्मान के मामले पर झुको भी नहीं। वह अपने मानवीय गुणों के कारण सभी को प्रभावित करता है। किसी को भी मदद की जरूरत हो वहाँ स्वयं पहुँचता है। राजू नाम के लड़के की वह अस्पताल में रात-दिन सेवा करता है। जो लड़के राजू के साथ रहने से पढ़ाई करने के कारण एतराज करते थें उन्हें वह कहता है- "आप लोग घण्टों पी लोगे, डिस्को नाच लोगे... लड़कियों के हॉस्टिल घुसे रहोगे... तब पढ़ाई का दबाव महसूस नहीं होगा। तुम्हारा अपना भाई-बन्धु आखरी घड़ियाँ गिन रहा है तो पढ़ाई याद आ रही है। तुम सब भागो यहाँ से... रामउजागर के

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 132
2. वही - पृष्ठ - 195

रहते कोई लड़का बीना तीमारदारी के नहीं मर सकता।"[1] आई.आई.टी. में सिर्फ दलित छात्रों को ही अपने-अपने जूठे बर्तन साफ करने को कहा जाता है। तब रामउजागर कहता है कि अगर सब अपने बर्तन साफ करेंगे तो हम भी करेंगे। उसके कहने के कारण ही यह बात रह जाती है। संस्थान का एक छात्र मोहन तनाव के कारण आत्महत्या करता है। उसे फाँसी के फंदे से उतारने के लिए कोई तैयार नहीं होता। रामउजागर पुलिस की मदद से उसकी लाश को नीचे उतारता है। इस घटना से उसके मन पर गहरा असर होता है। वह मानसिक रूप से असंतुलित होता है। उसे लगता है मोहन मरा नहीं है, व्यवस्था ने उसे पंखे पर लटका दिया है। वह अनुकूल को लिखता है - "जिस दिन से मोहन को पंखे से उतारा मुझे हर क्षण यही लगता है कि मेरी भी जगह वहीं है। मैं भी जिन्दा ही लटका हूँ। मुझे भी ये लोग उतारकर जिन्दा जला देंगे। मोहन के साथ भी ऐसा ही हुआ। मैंने अपने हाथों से उसे उतारा और जलाने के लिए उन लोगों को सौंप दिया।"[2] अत: स्पष्ट है कि रामउजागर मोहन की जगह खुद को महसूस करता है। उसे लगता है कि प्रत्येक दलित छात्र की नियति फाँसी के फंदे पर लटककर आत्महत्या करने की है। मोहन की मृत्यु से वह टुट जाता है। अत: उसका मानसिक संतुलन बिघड़ जाता है। संस्थान के अधिकारी मौके का फायदा उठाकर उसे एक साल की छुट्टी देते हैं। अंतत: वह अपने गाँव जाता है।

'परिशिष्ट' उपन्यास में नीलम्मा का चित्रण एक सवर्ण शोधयात्रा के रूप में हुआ है। सवर्ण होकर भी वह दलितों के प्रति सहानुभूति रखती है। वह मानसिक रूप से आहत रामउजागर को देखने सिरसाँ गाँव जाती है। राम के माता-पिता से मिलकर उसे संस्थान में वापस भेजने को कहती है। नीलम्मा की प्रेरणा से ही रामउजागर संस्थान में फिर से आता है। नीलम्मा तथा रामउजागर के अनेक मित्र उसका डॉक्टरी इलाज करवाते हैं। रामउजागर की स्थिति में परिवर्तन होने लगता है। वह छुट्टी समाप्त करके

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 145-146
2. वही - पृष्ठ - 157

संस्थान में फिर से प्रवेश मिले इसलिए प्रयास करता है। दलित छात्रों के प्रति सहानुभूति रखनेवाले प्रोफेसर मलकानी उसकी सहायता करते हैं। वे दलितों के मानवीय अधिकारों की लड़ाई लड़ते हैं। डिप्टी डायरेक्टर प्रोफेसर आठवले को मलकानी के बारे में कहते है- "अगर अगला जन्म उसका विजिटर के हाथ में होता तो बोर्ड से पास करा देता कि प्रोफेसर मलकानी का अगला जन्म इन्हीं लोगों की जाति में हो।"[1] इसी प्रकार प्रो.मलकानी को सवर्ण लोगों का विरोध सहना पड़ता है। वे रामउजागर को न्याय देने का प्रयास करते है। वे विद्यार्थियों के हित के लिए संस्थान तक छोड़ने को तैयार है।

संस्थान में फिर से प्रवेश करने के संबंध में रामउजागार 'डीन' से लेकर 'डायरेक्टर' तक सभी को मिलता है।सभी लोग उसकी बात को टाल देते हैं। उसके विषय पर हुई एस. यू. जी. सी. कमेटी की मिटिंग में उसपर अनेक झूठे आरोप लगाएँ जाते हैं। कुछ अध्यापक भी इसे सही मानकर रामउजागर को संस्थान में प्रवेश देने का विरोध करते हैं। प्रो. मलकानी ही उसका पक्ष लेते हैं लेकिन राम को संस्थान में फिर से प्रवेश नहीं दिया जाता। कमेटी के अध्यक्ष के अनुसार "मामला गंभीर विचार की माँग करता है। कोई भी निर्णय लेने से पूर्व चेयरमैन सीनेट से मशवरा करना जरूरी होगा।"[2] ऐसा उत्तर देकर रामउजागर के प्रार्थनापत्र पर निर्णय स्थगित कर देते हैं। संस्थान में प्रवेश के संबंध में रामउजागर को सभी ओर से अपमानित होना पड़ता है। उसे कोई भी रास्ता दिखाई नहीं देता। अंत में विफलता में आकर वह आत्महत्या करता है। आत्महत्या करने से पहले वह अपने पिताजी, अनुकूल और नीलम्मा को पत्र लिखता है। लिखा हुआ एक पत्र खुद की जेब में रखता है। उसमें वह लिखता है- "मुझे आगे बढ़ने का अवसर नहीं मिला तो कोई बात नहीं। मैं एक बड़े अवसर की खोज में अपने यान को प्रत्वलित कर चुका हूँ। जो लोग यहाँ के अवसर की लौ लगाये हैं उन्हें वे अवसर मोहेइया कराकर आप बड़े होंगे। बहुत बड़े। मेरी शुभकामनाएँ।"[3] रामउजागर की

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 271
2. वही - पृष्ठ - 270
3. वही - पृष्ठ - 287

आत्महत्या का दलित छात्रों की मानसिकता पर विपरित परिणाम होता है। इस घटना के बाद एक-दो छात्र घर वापिस लौट जाते हैं। अनुकूल अपने साथियों के बिखरे साहस को बटोरने लगता है। अनुकूल के पिता संस्थान में आते हैं। वे अनुकूल को घर लेकर जाना चाहते हैं। तब अनुकूल कहता है- "घर वापस लौटकर अपने को सुरक्षित महसूस करने के स्थान पर हम लोग अधिक अरक्षित हो जायेंगे। यह दूसरी तरह की आत्महत्या होगी।"[1] इससे स्पष्ट होता है कि अनुकूल अंत तक संघर्ष करने को महत्त्व देता है।

शोध-छात्रा नीलम्मा तथा प्रो. मलकानी रामउजागर की आत्महत्या की जाँच करने के लिए राजधानी दिल्ली तक जाकर प्रयास करते हैं। रामउजागर की आत्महत्या की जाँच करने के लिए जाँच अधिकारी नियुक्त किया जाता है। जाँच रिपोर्ट आने में छह महिने लग जाते हैं। जाँच अधिकारी अपने आपको तटस्थ सिद्ध करने की कोशिश करता है लेकिन वह तटस्थ नहीं रह सका। प्रो. मलकानी के गवाही से उसकी तटस्थता टूट जाती है। प्रो.मलकानी का मानना है कि - "नौजवान आपने आपमें दिशाएँ होते हैं। एक नौजवान का चला जाना एक सम्पूर्ण दिशा को अन्धी गली में परिणित कर देता है। रामउजागर जैसे होनहार छात्र की मृत्यु एक एक सम्भावना की मौत है। क्योंकि उसने एक ऐसे वर्ग में जन्म लिया था जहाँ किसी सम्भावना के जन्म लेते ही... माँ-बाप उसका गला घोट देने के लिए बाध्य हो जाते हैं या कर दिये जाते हैं?"[2] जाँच अधिकारी मलकानी की गवाही से उत्तेजित होता है।उसका मानना है कि एक ऐसे लड़के के लिए एक संस्था को हाराकीरी के लिए मजबूर नहीं किया जा सकता। वे अधिकारी आत्महत्या की जिम्मेदारी का कारण रामउजागर को ही मानता है। संस्थान के वातावरण का कोई भी दोष नहीं मानता। इस जाँच रिपोर्ट में एक हृदयहीन पदाधिकारी की संकुचित और कमजोर मनोवृत्ति ही दिखाई देती हैं। रामउजागर के पिता सुबरन चौधरी जाँच अधिकारी के चिट्ठी के जबाव में पत्र लिखते हैं। उसमें वे अपना बयान देते हैं - "मैं अपना बयान

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 291
2. वही - पृष्ठ - 292

देता हूँ ... इसी को मेरा बयान समझ लीजिए ... मेरे बेटे को बड़े-बड़े घरों और ऊँची जात के लड़कों और मास्टरों ने मरने के लिए मजबूर कर दिया।"[1] इस पत्र में उन्होंने अपने मन की भावनाओं को ही व्यक्त किया है।

समाज में अन्याय से टकराने के दो मार्ग है- एक गांधी का सत्याग्रह, आत्मबल, सहनशीलता तथा शत्रु के हृदयपरिवर्तन का।दूसरा मार्ग है- सीधे विरोध का।पहले मार्ग का अनुसरण अनुकूल करता है और धीरज के साथ अपने उपर के अन्याय-अत्याचार को सहता है। तो रामउजागर सीधा विरोध करता है। लेकिन अकेला होने के कारण टुट जाता है। उसे लगता है कि प्रत्येक अनुसूचित जाति के छात्र का यही होना है।

'परिशिष्ट' उपन्यास में गिरिराज किशोर ने कुछ सवाल उठाएँ हैं। प्रकृति घृणामुक्त है तो मनुष्य क्यों नही? कोई जाति अनुसूचित नहीं होती, मानसिकता होती है। और यही मानसिकता समाज जीवन का अभिन्न हिस्सा है।

2.3 परिशिष्ट : उच्च शिक्षा संस्थानों में दलितों पर होते अन्यायों का जीवंत दस्तावेज :

देश की महान शिक्षा संस्थानों में अपनी जाति के कारण दलित छात्रों को अनेक कठिनाईयों से सामना करना पड़ता है। इसका यथार्थ चित्रण 'परिशिष्ट' उपन्यास में हुआ है। यह जातिगत विषमता की भयानक मानसिकता को उजागर करनेवाला उपन्यास है। दलित छात्रों के जीवन का यथार्थ अंकन करनेवाली गिरिराज किशोर की यह पहली कृति है।

'परिशिष्ट' उपन्यास का कथानक अंतर्राष्ट्रीय स्तर के शिक्षा संस्थान आई.आई. टी. कानपुर से संबधित है। स्वयं लेखक गिरिराज किशोर ने वहाँ अधिकारी के पद पर काम किया है।लेखक ने वहाँ जो देखा, भोगा, सहा, अनुभव किया उसकी

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 307

यथार्थ अभिव्यक्ति 'परिशिष्ट' में की है। वे लिखते है - "जब तक मनुष्य स्वयं नहीं भोगता तब तक बता भी नहीं सकता। पिछले चार-पाँच वर्षो के दौरान 'अनुसूचित' होने की मानसिकता के प्रति संवेदना का निर्माण हो जाने पर ही कलम उठाने का साहस हुआ।"[1] अत: इस उपन्यास में लेखक ने आई. आई. टी. जैसी उच्च तकनीकी शिक्षा संस्थान में दलित छात्रों पर उच्चवर्गीयों द्वारा होनेवाले अन्याय-अत्याचार का वास्तविक चित्रण किया है।

उपन्यास का नायक अनुकूल को उसके पिताजी बावनराम इंजीनिअर बनवाना चाहते है। वे लोगों के विरोध की और ध्यान न देकर अनुकूल को आई. आई. टी. में दाखिल करने का निश्चय करते हैं। इसलिए वे आरक्षण का लाभ उठाना जरूरी समझते हैं। इस संदर्भ में वे अपने विभाग के सांसद की सिफारिश जरूरी समझते हैं। सांसद चौधरी को मिलने के लिए दिल्ली जाते हैं। अनुकूल के साथ सांसद के घर ठहरते हैं। वहाँ ठहरे लोगों का दलितों के प्रति व्यवहार, दूसरे सांसद राजेंद्रसिंह ठाकुर और चौधरी की पत्नी का जातीयवादी दृष्टिकोण, सांसद चौधरी की चालाकी आदि, बातों से पूरी व्यवस्था निम्न वर्ग के खिलाफ दिखाई देती है। बावनराम को बार-बार जात का सरकारी पण्डत, सरकारी महादेव, सरकार के हकीकी दामाद कहकर अपमानित किया जाता है। यह सब देखने के पश्चात अनुसूचित जाति से संबधित सरकारी नीति की वास्तविकता स्पष्ट होती है। अनेक बाधाओं, रुकावटों के बावजूद बावनराम अनुकूल को आई. आई. टी. में दाखिल कराने में सफल होते हैं। लेकिन इस सफलता तक पहुँचाने के लिए बावनराम को जो कठिनाईयाँ, आयी उनका उपयोग लेखक ने अनुसूचित जाति से संबधित सरकारी नीति की वास्तविकता स्पष्ट करने के लिए किया है। लेकिन ऐसा भी नहीं है कि व्यवस्था से जुड़े सब लोग जातीयवादी मानसिकता रखते हैं। ठाकुर राजेंद्रसिंह और जमींदार शेठजी जैसे लोग राजनीति का खुद के फायदे के लिए उपयोग करते हैं। वही सांसद चौधरी और कृष्णन जैसा अधिकारी अनुकूल की मदद करते हैं।

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, भूमिका से, पृष्ठ - 291

सरकार की और से दलित तथा पिछड़े वर्ग के हितों के लिए विविध योजनाएँ तैयार की जाती है। लेकिन आई.आई.टी. में ऐसा कोई बंधन या नियम दिखाई नहीं देता। यहाँ पढ़ रहे दलित तथा अनुसूचित जाति के छात्र आर्थिक अभाव के शिकार है। वे छात्रावास में अलग विंग में रहते हैं। उनके 'विंग' को 'व्यंग्य' से 'गांधी मोहल्ला' या 'जाँघियाँ कण्टिजेण्ट' कहा जाता है। इन छात्रों के व्यवहार पर एक प्रकार का दबाव महसूस होता है। डॉ.मुन्ना तिवारी ने लिखा है- "ये उच्चवर्णीय छात्र हरिजन छात्रों को अवांछित और घुसपैठियाँ समझते हैं, जैसे मंदिर के प्रागंण में दो चार सुअर घुसे आये।"[1] उच्च जातियों के छात्र अलग 'विंग' में रहते हैं। उनका व्यवहार मुक्त होता है। उनमें से कुछ सिगार पिते हैं, क्लब में जाते हैं। अन्य छात्रों की चिट्ठियाँ भी पढ़ते हैं। इन दोनों वर्ग में किसी भी प्रकार का मेल-जोल दिखाई नहीं देता। खन्ना कहता है- "आयेंगे चोर दरवाजे से और चाहेंगे कि बन जाये सर सी. वी रमण।"[2] अत: स्पष्ट होता है कि आरक्षण के तहत आये दलित छात्रों को संस्थान में अनेक प्रकार की पीड़ाएँ, यातनाएँ सहनी पड़ती है। यहाँ के अध्यापकों से लेकर व्यवस्थापन के अधिकारों तक हर कोई उन्हें 'घुसपैठिए' मानता है। डॉ.सत्यदेव त्रिपाठी ने लिखा है- "इसका व्यापक स्वरूप आई.आई.टी. संस्थान को लेकर 'परिशिष्ट' में उभरा है, जहाँ के छात्र व अधिकांश शिक्षक आरक्षण विरोधी हैं और दलित छात्रों से जमकर बदला लेते हैं। फलत: दलित प्रतिभागी पागल हो जाते हैं और आत्महत्याएँ कर लेते हैं।"[3] उच्च वर्ग के छात्रों में दलित वर्ग के प्रति क्रोध तथा नफरत दिखाई देती है। उच्च वर्ग का छात्र खन्ना अनुकूल जैसे दलित छात्रों का बार-बार अपमान करता है उनकी जाति को कोसता रहता है। अत: स्पष्ट होता है कि शिक्षा के साथ-साथ दलितों को कुचलनेवाली पारंपारिक मानसिकता का चित्रण प्रस्तुत उपन्यास में आया है। फिर भी ऐसे माहौल में अनुकूल सबकुछ सहते हुए बदलाव की उम्मीद न छोड़कर अंत तक संघर्ष करता है।

1. डॉ.मुन्ना तिवारी - दलित चेतना और समकालीन हिंदी उपन्यास, पृष्ठ - 109
2. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 184
3. डॉ.सत्यदेव त्रिपाठी - हिंदी उपन्यास : समकालीन विमर्श, पृष्ठ - 34

'परिशिष्ट' उपन्यास का और एक प्रमुख पात्र रामउजागर है। वह अनुसूचित जाति का होकर भी संघर्षशील है। आरक्षण के प्रावधान से पहले ही जे. ई. ई. द्वारा उसे संस्थान में प्रवेश मिला है। वह अपने मानवीय गुणों के कारण सभी को प्रभावित करता है। अनुसूचित जाति के छात्र का तो वह आधार है इसलिए खन्ना जैसे उच्चवर्गीय छात्र उससे ईर्ष्या करते है। अनुकूल रामउजागर का मित्र बनता है। वे दोन्हों संस्थान के दलित छात्रों का नेतृत्व करते है। इस कारण खन्ना अनुकूल को मारपीट करता है। अत: स्पष्ट है कि दलितविरोधी मानसिकता जो हजारों सालों से चलती आ रही है उसमें आज भी कोई मूलभूत बदलाव दृष्टिगोचर नहीं होता।

आई. आई. टी. का माहौल भी जातीयता से अलग नहीं है। यहाँ उच्च-नीचता का संबंध का सिर्फ छात्रों तक सीमित हैं ऐसा नहीं है। डीन अनुकूल के पिताजी बावनराम को जातीयता के कारण संस्थान के गेस्ट हाऊस में जगह नहीं देना चाहता। इस संदर्भ में वह निलम्मा से कहता है- "यहाँ रहकर हम लोग यहाँ की ऊँची जातियों को नाराज करके खतरा कैसे मोल ले सकते है?"[1] अत: स्पष्ट है कि यहाँ के अध्यापक और अधिकारी भी भेदाभेद की भावना से ग्रस्त हैं। सभी मिलकर दलित छात्रों से अमानवीय व्यवहार करते हैं। इस व्यवहार के पीछे अतीत की परंपरा और संस्कार भी विद्यमान है। संस्थान के भयावह वातावरण में तनाव के कारण मोहन आत्महत्या करता है। रामउजागर फाँसी के फँदे से उसकी लाश को उतारता है। इस घटना का उसके मन पर गहरा असर होता है। वह मानसिक रूप से असंतुलित होता है। मौके का फायदा उठाकर संस्थान के अधिकारी उसकी एक साल के लिए छुट्टी कर देते हैं। शोध-छात्रा नीलम्मा सवर्ण होते हुए भी दलितों के प्रति सहानुभूति रखती है। उसकी प्रेरणा से ही रामउजागर संस्थान में फिर से लौटता है। वह छुट्टी खत्म करके पढ़ाई नियमित करना चाहता है। लेकिन उसे संस्थान में प्रवेश नहीं दिया जाता। संस्थान के अधिकारी और अध्यापक उसके विरोध में

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 181

खड़े हो जाते हैं। एकमात्र अध्यापक मलकानी उसके पक्ष का समर्थन करते है लेकिन उनका कुछ नहीं चलता। सभी और से अपमानित होकर रामउजागार आत्महत्या करता है। वह अपने अंतिम पत्र में लिखता है - "किसी घृणा या शिकायत के कारण नहीं, एक आत्मीयता और आत्मसन्तोष के कारण मेरा केवल यही प्रश्न ही कि जब यह प्रकृति, जिससे हम सबकुछ पाते हैं, घृणामुक्त हैं तो मनुष्य मुक्त क्यों नहीं?"[1] अत: स्पष्ट है कि उच्चवर्गीय समाज की जातीयवादी मानसिकता के कारण दलितों को हमेशा अपमान, नफरत का शिकार होना पड़ा है। सारी व्यवस्था ऐसे लोगों से भरी हुई है कि जो रामउजागर जैसों का मनोबल तोड़ना ही अपना प्रधान उद्देश्य समझते हैं।

आई.आई.टी. जैसी राष्ट्र की महान शिक्षा संस्थाओं में दलितों के प्रति अपनाया गया रुख किस प्रकार अमानवीय है इसका बेबाक चित्रण गिरिराज किशोर ने किया है - "राष्ट्रीय महत्त्व की महान शिक्षा संस्थाओ में किसी तरह दाखला प्राप्त करनेवाले साधनहीन और तथाकथित जातिहीन छात्रों की त्रासदी, उबलते तेल में डाल दिये जानेवाले व्यक्ति के संत्रास की तरह होती है जो पहली बार 'परिशिष्ट' के रूप में सामने आयी है।"[2]

उपन्यास के अंत मे 'परिशिष्ट' नाम से दो संक्षिप्त विवरण दिए है। जिसमें पहला जाँच रिपोर्ट का खुलासा है और दूसरा रामउजागर के पिता ने जाँच अधिकारी को लिखा पत्र हैं। 'परिशिष्ट' में जाँच अधिकारी की संकुचित मनोवृत्ति का दर्शन होता है। यह अधिकारी रामउजागर की आत्महत्या के संबंध में शब्दों का खेल करके थोड़ा-सा भी दोष संस्थान के वातावरण को नहीं देता। सारा दोष या जिम्मेदारी का हकदार रामउजागर को ही मानता है। वास्तव में रिपोर्ट का अंत जितना औपचारिक है उतनी ही पूरी जाँच भी औपचारिक है। जिसका उद्देश्य संस्थान के अधिकारियों को बचाने के अलावा और कुछ नहीं हैं। इसके विपरित रामउजागर के पिता का पत्र सार्थक

---

1. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, पृष्ठ - 287
2. गिरिराज किशोर - परिशिष्ट, मुखपृष्ठ से

प्रतित होता है। उसमें कुछ छिपाने का प्रयास नहीं किया है। जो है उसे स्पष्टत: से व्यक्त किया है।

गिरिराज किशोर ने 'परिशिष्ट' में आई.आई.टी. में स्थित दलित छात्रों की भयावह स्थिति का बड़ा ही प्रभावी चित्र प्रस्तुत किया है। आनंद प्रकाश ने लिखा है - "उपन्यास में एक हद तक आजादी के बाद उभरने वालो सामाजिक और राजनीतिक फलक को देखने और समझने की कोशिश है। लेखक का केंद्रीय सरोकार है अनुसूचित जातियों को मिलनेवाली वास्तविक सुविधा का प्रश्न, पिछड़ी जातियों और निम्न वर्गों के विकास के लिए अपनायी जानेवाली नीतियाँ कितनी ठोस हैं, इन वर्गों के लिए किये जानेवाले वायदों में कितना सार हैं, इस संदर्भ में पैदा होनेवाली समाज-चेतना का असली रूप क्या है? लेखक ने यह प्रश्न पूरे विस्तार से उपन्यास में उठाये हैं।"[1] अत: परिशिष्ट उपन्यास में लेखक ने दलित लोगों की जीवन की महत्वपूर्ण समस्याओं को उठाया है। दलित जाति के उद्धार की भाषा आश्वासनों में दिखाई देती है लेकिन वास्तविकता में उसे कोई अपनाता नजर नहीं आता। आजादी के साठ साल बाद भी आज कुछ इसी प्रकार की स्थिति स्कूल-कालेजों और विश्वविद्यालयों में बनी हुई परिलक्षित होती है। आज यह महसूस होता है कि जितने अधिक लिखे- पढ़े या उच्चशिक्षित उतने अधिक वे जातीयवादी और कट्टर बने हैं।

निष्कर्ष -

आज साहित्य की सर्वाधिक शक्तिशाली विधा उपन्यास है। इसमें व्यक्ति और समाज का चित्रण होता है। हिंदी साहित्य में **1960** ई. के बाद उपन्यास शिल्प विधा में परिवर्तन शुरू हुआ। **1975** ई. में यह परिवर्तन स्पष्टता से परिलक्षित होने लगा। आज कथावस्तु प्रयोगशील हो रही है। परंपरागत तत्वों से हटकर उपन्यासों की रचनाएँ हो रही है। गिरिराज किशोर प्रयोगशील लेखक है। उन्होंने अनेक नए-नए

---

1. संपा.अवधनारायण मुदगल - सारिका (मासिक) , पृष्ठ - 67

विषयों को उपन्यासों के द्वारा प्रस्तुत किया है। 'परिशिष्ट' में उन्होंने दलित जीवन, शिक्षा व्यवस्था तथा आरक्षण आदि को स्थान दिया है। 'परिशिष्ट' में कथा की अपेक्षा चरित्र को तथा चरित्र से अधिक परिवेश को महत्त्व दिया है।

गिरिराज किशोर ने 'परिशिष्ट' उपन्यास में दलित होने की भयावह मानसिकता को और आरक्षण के आधार पर उच्च शिक्षा संस्थानों में दाखिला लेनेवाले छात्रों की त्रासदी को वाणी दी है। इसमें लेखक ने कुछ सवाल भी उठाएँ हैं - प्रकृति घृणामुक्त है मनुष्य मुक्त क्यों नहीं?

बावनराम का बेटा अनुकूल दलितों की बिरादारी में पहला दसवीं पास लड़का है। बावनराम आरक्षण का लाभ लेकर उसे इंजीनियर करना चाहते हैं। इसके लिए वे सांसद चौधरी साहब की सहायता लेते हैं। फिर भी अनुकूल को आई. आई. टी. तक पहुँचने के लिए अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। यह देखकर दलितों के प्रति सरकारी नीति की वास्तविकता तथा सवर्णों की घृणित मानसिकता स्पष्ट होती है।

आई.आई.टी. में दलित छात्रों को 'घुसपैठिए' माना जाता है।उच्चवर्ग का छात्र खन्ना तथा उसके साथी दलित छात्रों पर अमानवीय अत्याचार करते हैं। संस्थान के अध्यापक तथा अधिकारी भी खन्ना और कंपनी का ही साथ देते हैं। इससे संस्थान में पढ़नेवाले किसी दलित छात्र की टाँग टूट जाती है, किसी को आत्महत्या करनी पड़ती है, कोई पागल हो जाता है तो कई दलित छात्र अपनी पढ़ाई अधूरी छोड़कर घर चले जाते हैं लेकिन अनुकूल है कि अंत तक संघर्षशील रहता है। उसका मानना है कि घर जाकर हम अधिक अरक्षित हो जाएंगे, यह दूसरी तरह की आत्महत्या होगी। अत: अनुकूल का संघर्ष औरों के लिए एक प्रकार की प्रेरणा है।

लेखक ने अंत में स्पष्ट किया है कि अनुसूचित कोई जाति नहीं मानसिकता होती है। अगर जातीयवाद की दिवार को तोड़ना है, भेदाभेद की नीति को समाप्त करना है तो सवर्णों की मानसिकता में परिवर्तन लाना जरूरी है और यह जरूरी

नहीं कि परिवर्तन सामूहिक हो अगर हर एक सवर्ण अपने-आप को परिवर्तित करने का निश्चय करें तो यकिनन घृणित मानसिकता बदलकर समाज एवं व्यक्तियों में स्वस्थ्य मानसिकता निर्माण होगी जो मानवता के पक्ष को उजागर करने में सक्षम साबित होगी।